न्याय दर्शन : एक ज्ञान मीमांसीय विश्लेषण

Philosophy of Nyaya : An Epistemological Analysis

शिक्षाशास्त्र में डाक्टर ऑफ फिलॉसफी (पी–एच.डी.)

उपाधि हेतु

प्रस्तुत

शोध–प्रारूप

शोध निर्देशक	शोधकर्ता
प्रोफेसर जे.पी. बागची,	सविता निर्वाण
शिक्षा विभाग,	एम.एससी., एम.एड.
क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, अजमेर	

क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान (एन.सी.ई.आर.टी.), अजमेर

महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर

सत्र : 2016

(Appendix : IV)

महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय अजमेर

1	Name of Scholar		Savita Nirwan **सविता निर्वाण**
2	Title of Research Work		न्याय दर्शन : एक ज्ञान मीमांसीय विश्लेषण Philosophy of Nyaya : An epistemological Analysis
3	Location :		
	(a)	Institution/Department where the work is to be done	क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, (एन.सी.ई. आर.टी.) अजमेर– 305004, राज.
	(b)	Geographical area of Investigation, if any.	....

4 प्रस्तुत शोध की प्रस्तावना, महत्व एवं उद्देश्य

4.1 न्याय दर्शन :– न्याय दर्शन का विषय न्याय का प्रतिपादन है। 'न्याय' शब्द का अर्थ है जिसके द्वारा किसी प्रतिपाद्य विषय की व्याख्या की जा सके या जिसके द्वारा किसी निश्चित सिद्धान्त पर पहुँचा जा सके। (नीयते प्राप्यते विवक्षितार्थ – सिद्धिरनेन इति न्यायः)

4.2 न्याय का व्यापक अर्थ :– विभिन्न प्रमाणों की सहायता से वस्तुतत्व की परीक्षा (प्रमार्णोरथं परीक्षणां न्यायः)

न्याय का दूसरा नाम आन्वीक्षिकी भी था। अन्वीक्षा का तात्पर्य प्रत्यक्ष तथा आगम के द्वारा उपलबध ज्ञान। तर्क के द्वारा किसी विषय का अनुसंधान करना ही

आन्वीक्षिकी है। अतः इसे तर्कवादी दर्शन भी कहते है (हेतु विद्या तथा हेतु शास्त्र भी कहा जाता है) प्रमाण की मीमांसा करने से प्रमाण शास्त्र भी कहलाता है।

(वात्स्यायन के शब्दों में ''न्याय विद्या समस्त विद्यायों का प्रदीप है सब कर्मो का उपाय तथा सब धर्मों का आश्रय है।'')

Dr. S Radhakrishnan के अनुसार "The system of Nayana, which studies the general plan and method of critical inquiries, may be called the science of sciences."

न्याय दर्शन का इतिहास लगभग 2 हजार वर्षो का इतिहास है। इसमें विकास की दो धाराएँ दृष्टिगत होती है। प्रथम धारा सूत्रकार **गौतम** से होती है जिनका नाम अक्षपाद भी है तथा जिनके न्याय सूत्र में प्रमाण, प्रमेय, सशंय, प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धान्त, अवयव तर्क, निर्णय वाद, जल्प, वितण्डा, हेत्वाभास, छल, जाति तथा निग्रह स्थान इन सोलह तत्वों का विवेचन है यह धारा पदार्थ मीमांसात्मक (Categoristic) प्रणाली है।

दूसरी धारा का प्रवर्तन मिथिला के प्रसिद्ध न्यायिक **गंगेश उपाध्याय** ने 'तत्व चिन्तामणि' ग्रन्थ को लिखकर किया। इसमें उन्होंने प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान तथा शब्द इन चार प्रमाणों का गहन विवेचन किया इसलिए इसे प्रमाण मीमांसात्मक (Epistemological) प्रणाली कहते है।

प्रथम धारा को 'प्राचीन न्याय' व द्वितीय धारा को 'नव्य न्याय' कहते है। प्राचीन न्याय में पदार्थो की मीमांसा तथा नव्य न्याय में प्रमाणों का विवेचन मुख्य विषय है। प्राचीन न्याय मुक्ति की प्राप्ति व नव्य न्याय तर्क को प्रमुखता देते है।

4.2 ज्ञान मीमांसा का अर्थ (Epistemology) :– इसमें सत्य ज्ञान से संबंधित समस्याओं का हल खोजा जाता है, यथाः सत्य ज्ञान क्या है, ज्ञान प्राप्त करने के साधन कौन कौन से है क्या मानव बुद्धि इस ज्ञान को प्राप्त कर सकती है।

4.3 न्याय दर्शन की ज्ञान मीमांसा :– भारतीय दर्शन मे न्याय दर्शन ही एक ऐसा प्रमुख दर्शन है जो ज्ञान मीमांसा का तार्किक रुप व्यक्त करता है। तर्क दो प्रकार क होते है (i) मान्य (ii) अमान्य। न्याय सूत्र में स्वीकार किया गया है कि ज्ञान के द्वारा ही स्वरुपों का बोध होता हैं। चक्षु, रसना, ध्राण, त्वक तथा श्रोत इन 5 इन्द्रियों के द्वारा एवं मनस् की सहायता से आत्मा से ज्ञान उत्पन्न होता है। ज्ञान प्राप्ति के लिए ज्ञाता एवं ज्ञेय की आवश्यकता होती है इनके बिना ज्ञान सम्भव नहीं है। न्यायसूत्र के अनुसार ज्ञान दो प्रकार का होता है स्मरण तथा अनुभव।

जो ज्ञान संस्कार मात्र से उत्पन्न होता है उसे स्मरण ज्ञान कहते है स्मृति से भिन्न ज्ञान को अनुभव कहा जाता है।

4.4 न्याय दर्शन में ज्ञान के निम्न स्वरूप बताए है :–

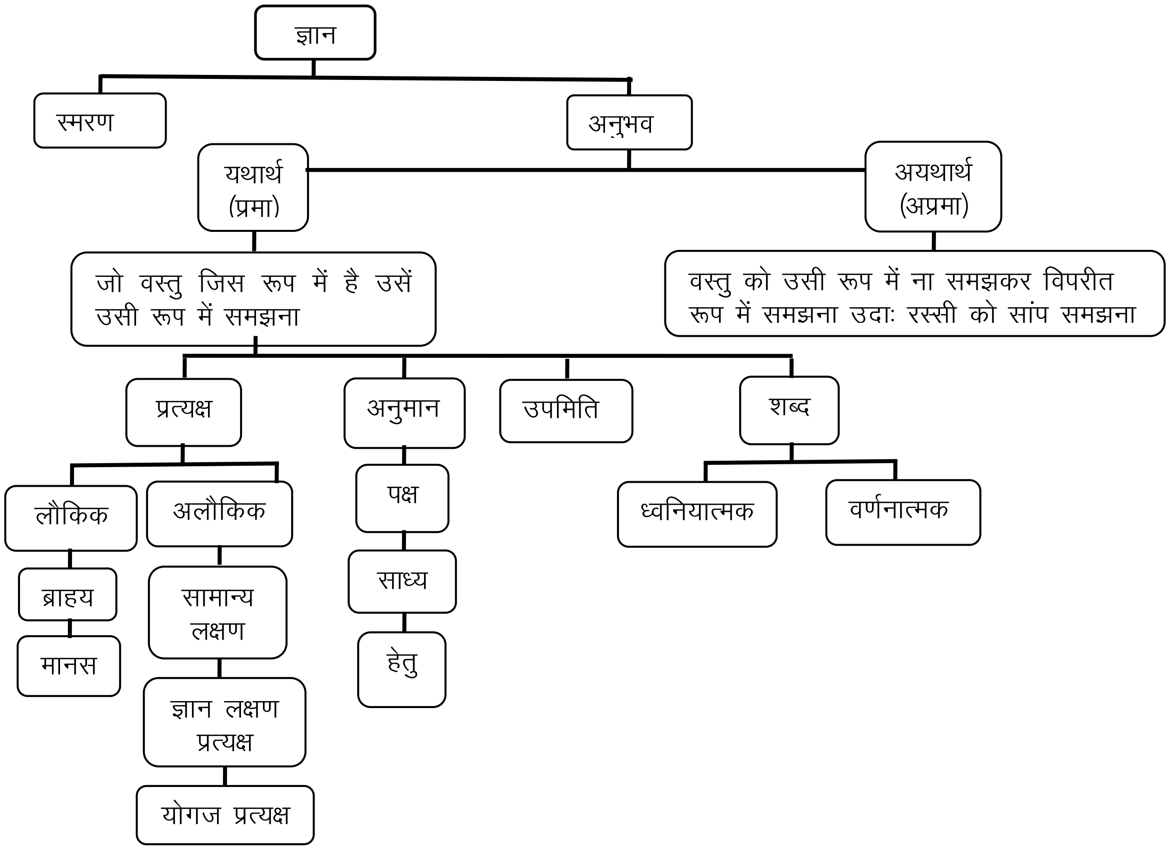

4.5 **न्याय दर्शन के 16 पदार्थ :–** मोक्ष की अनुभूति तत्व ज्ञान अर्थात् वस्तुओं के वास्तविक स्वरुप को जानने से ही हो सकती है इसी उद्देश्य से न्याय दर्शन में 16 पदार्थों की व्याख्या हुई हैं ये 16 पदार्थ इस प्रकार हैः–

1	प्रमाण	ज्ञान के साधन को प्रमाण कहा जाता है। न्याय के मतानुसार 4 प्रमाण है।
2	प्रमेय	ज्ञान के विषय को प्रमेय कहा जाता है। प्रमेय के अन्दर ऐसे विषयों का उल्लेख है जिनका वास्तवकि ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है।
3	सशंय	मन की अनिश्चित अवस्था।
4	प्रयोजन	जिस वस्तु की प्राप्ति के लिए जो कार्य किया जाता है।
5	दृष्टान्त	ज्ञान के लिए अनुभव किए हुए उदाहरण दृष्टान्त कहलाते है।
6	सिद्धान्त	सिद्ध स्थापित सिद्धान्त को मानकर ज्ञान के क्षेत्र में आगे बढ़ना सिद्धान्त कहा जाता है।
7	अवयव	अनुमान के अवयव को अवयव कहा जाता है।
8	तर्क	यदि किसी बात को साबित करना है, तब उसके उलटे को सही मानकर उसकी अप्रमाणिकता को दिखलाना तर्क कहा जाता है।
9	निर्णय	निश्चित ज्ञान को निर्णय कहा जाता है निर्णय को अपनाने हेतु सशंय का त्याग आवश्यक है।
10	वाद	वाद वह विचार है जिसमें सभी प्रमाणों व तर्को की सहायता से विपक्षी के निष्कर्ष को काटने का प्रयास किया जाता है।
11	जल्प	जीतने की अभिलाषा से तर्क करना जल्प कहा जाता है।
12	वितण्ड़ा	यह भी केवल जीतने के उद्देश्य से अपनाया जाता है इसमें प्रतिवादी के विचारों को काटने की चेष्टा की जाती है।
13	हेत्वाभास	प्रत्येक अनुमान हेतु पर निर्भर रहता है। यदि हेतु में कोई दोष हो तो अनुमान भी दूषित हो जाता है।
14	छल	किसी व्यक्ति की कही बात का अर्थ बदलकर उसमें दोष संकेत करना छल है।
15	जाति	समानता व असामनता के आधार पर जो दोष दिखलाया जाता है वह जाति है।
16	निग्रह स्थान	वाद–विवाद के सिलसिलों में जब वादी ऐसे स्थान पर पहूँच जाता है जहाँ उसे हार माननी पड़ती है तो वह निग्रह स्थान कहलाता है।

न्याय दर्शन की ज्ञान मीमांसा को ध्यान मे रखते हुए हम अपने शोध कार्य मे निम्नलिखित बिन्दुओं पर विचार करेगें।

1 ज्ञान मीमांसा का अर्थ।

2 ज्ञान मीमांसा का शिक्षा दर्शन में महत्व।

3 ज्ञान मीमांसा और ज्ञान के सिद्धान्त।

4 न्याय दर्शन

5 न्याय दर्शन की उत्पति और इसका साहित्य

6 न्याय दर्शन के 16 पदार्थ

7 न्याय दर्शन की ज्ञान मीमांसा

8 न्याय दर्शन में प्रमाण्यवाद

9 न्याय दर्शन और ज्ञान के सिद्धान्त

10 बुद्धिवाद

11 अनुभव वाद

12 उपयोगिता वाद

13 प्रयोजन वाद

14 सरंचना वाद (Constructivism)

15 न्याय दर्शन की ज्ञान मीमांसा का विश्लेषण

16 शिक्षा दर्शन में ज्ञान मीमांसा

17 न्याय दर्शन की ज्ञान मीमांसा

18 न्याय दर्शन की ज्ञान मीमांसा का शिक्षा दर्शन में महत्व

4.6 शिक्षा दर्शन का अर्थ व परिभाषा कर्निधम के अुनसार :– ''प्रथम, दर्शन 'सभी वस्तुओं का विज्ञान है इस प्रकार शिक्षा–दर्शन, शिक्षा की समस्याओं को अपने सभी मुख्य पक्षों में देखता है। द्वितीय, दर्शन सभी वस्तुओं को अन्तिम तर्को एवं कारणों के माध्यम से जानने का विज्ञान है इसलिए भी शिक्षा दर्शन– शिक्षा के क्षेत्र में गहन तर समस्याओं का समग्र रुप में अध्ययन करता है और शिक्षा विज्ञान के लिए उन

समस्याओं को अध्ययन के लिए छोड़ देता है जो तात्कालिक है तथा जिनका वैज्ञानिक विधि से सरलतापूर्वक अध्ययन किया जा सकता है, उदाहरणार्थ छात्र योग्यता के मापन की समस्या''। अतः हम कह सकते है कि शिक्षा दर्शन– दर्शन शास्त्र की भांति एक विषय है जो शिक्षा की गहन समस्याओं पर तर्कपूर्ण ढंग से विचार करता है और शैक्षिक समस्याओं का दार्शनिक ढंग से हल निकालने का प्रयत्न करता है।

4.7 न्याय दर्शन का शैक्षिक योगदान :–

1 इस दर्शन ने ज्ञानेन्द्रिय शिक्षा पर बल दिया है।

2 यह दर्शन शिक्षा में स्व शिक्षा पर बल देता है।

3 यह दर्शन शिक्षा में वैज्ञानिक विधि पर बल देता है।

4 यह शिक्षा में श्रव्य दृश्य सामग्री का प्रयोग के महत्व को स्पष्ट करता है।

5 यह शिक्षा के पाढ्यक्रम मे यथार्थ ज्ञान के साथ–साथ आध्यात्मिक ज्ञान को भी स्थान प्रदान करता है परन्तु आध्यात्मिक ज्ञान की प्राप्ति के लिए यथार्थ को आधार बनाता है।

6 यह दर्शन ज्ञान मीमांसा पर अधिक बल देता है।

4.8 व्यवहारिक्तावाद (Pragmatism) :– इस विचार धार के अनुसार इस संसार की रचना अनेक पदार्थो के योग से हुई है और यह संसार सदैव निर्माण की अवस्था में रहता हैं। इस इन्द्रिय ग्राह जगत के अलावा अन्य कोई जगत नहीं और ना ही आत्मा या परमात्मा का अस्तित्व। इसके अनुसार हम संसार मे जो कुछ भी देख रहे है वह किसी ना किसी क्रिया का परिणाम है। इसके अनुसार मानव संसार का सर्वश्रेष्ठ प्राणि है एवं वे वस्तुए व क्रियाएं सत्य है जो मानव के लिए उपयोगी है यह दर्शन निश्चित मूल्यों आदर्शो व सत्यों मे विश्वास नहीं करता है।

'व्यावहारिकता वाद हमे अर्थ का सिद्धान्त, सत्य का सिद्धान्त, ज्ञान का सिद्धान्त और वास्तविकता का सिद्धान्त देता है'। **(james B. Prett)**

व्यावहारिकतावाद दर्शन की वह विचारधारा है जो इस संसार को विभिन्न तत्वों और क्रियाओं का परिणाम मानती है और यह मानती है कि यह भौतिक संसार ही सत्य है इसके अतिरिक्त अन्य संसार नहीं है। यह आत्मा को एक क्रियाशील तत्व के रुप में स्वीकार करती है यह प्रतिपादन करती है कि मनुष्य जीवन का उद्देश्य उच्च सामाजिक जीवन की प्राप्ति कर सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करना है।

व्यवहारिकतावादी जॉन डीवी के अनुसार–शिक्षा के दो अंग है 1 मनोवैज्ञानिक 2 सामाजिक। प्रथम मनोवैज्ञानिक से तात्पर्य जन्मजात रुचि, रुझान, शक्ति व योग्यता से है।

द्वितीय बच्चे जन्म से ही क्रियाशील होते है अतः उन्हें स्वयं करके स्वयं से अनुभव सीखने दे।

तुतीय बात की शिक्षण विधि ऐसी होनी चाहिए जो समस्त ज्ञान को एक ईकाई के रुप में विकसित करें समस्त विषय एक दूसरे से जोड कर सिखाएं।

उन्हें ज्ञानेन्द्रियों द्वारा सीखने, करके सीखने व अनुभव द्वारा सीखने पर बल दिया जाना चाहिए।

4.9 बुद्धिवाद (Rationalism) :– अग्रंजी भाषा में व्यवहचत शब्द Rationalism जिसका अनुवाद बुद्धिवाद किया गया है, अनिश्चित शब्द है। प्रायः इस शब्द को तीन विभिन्न अर्थो में काम में लाया गया है।

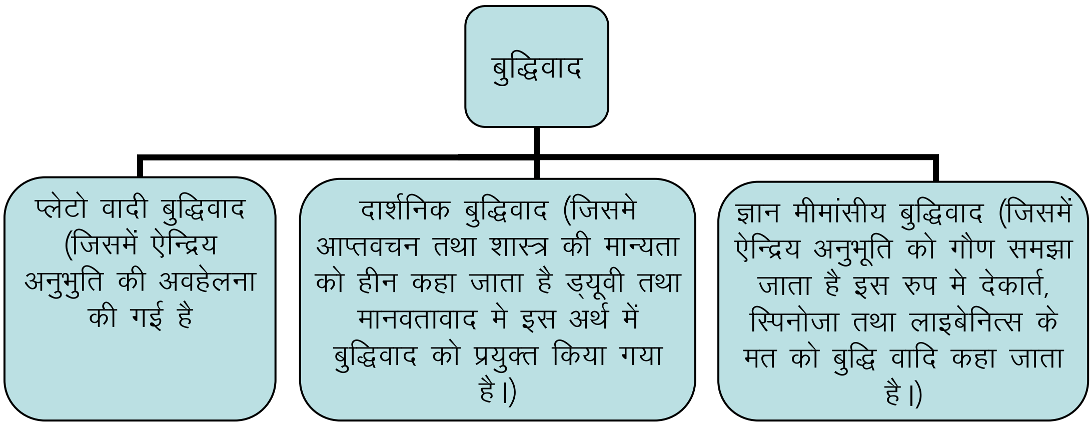

1 प्लेटों ने गणितीय ज्ञान को ज्ञान का उग्र उदाहरण अथवा आदर्श स्वीकार किया है। उसके अनुसार गणितीय ज्ञान को प्राप्त करने के लिए इन्द्रियानुभव की आवश्यकता नहीं होती। उनके अनुसार सभी प्रकार का शुद्ध ज्ञान मानव के अन्दर है जिसकी उसे विस्मृति रहती है।

2 दार्शनिक बुद्धिवाद का सन्दर्भ इन्द्रियानुभव ना होकर आप्तवचन (authority) तथा शास्त्र ज्ञान के प्रति विरोधभाव में प्रदर्शित होता है दार्शनिक बुद्धिवाद के अनुसार बिना तर्क बुद्धि के किसी भी विषय का ज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता है।

3 ज्ञान मीमांसीय बुद्धिवाद (Epistemological Rationalism) में तर्कना बुद्धि को ज्ञान प्राप्ति का एकमात्र साधन स्वीकार किया जाता हे और इसके साथ–साथ इन्द्रियानुभव को हीन बताया जाता है। चूँकि तर्कना बुद्धि के द्वारा सम्प्रत्यक्ष (Concept) प्राप्त किया जाता है, इसलिए ज्ञान मीमांसीय बुद्धिवाद के अनुसार सही ज्ञान सम्प्रत्यात्मक होता है, न कि प्रत्यक्ष मूलक।

4.10 अनुभव वादः– (Empiricism) :- अनुभव वाद के अनुसार ज्ञान मानक अनुभूति पर ही निर्भर होता है। प्रश्न यह उठता है कि किस प्रकार की अनुभूति के द्वारा ज्ञान की रचना होती है? जिसे हम अनुभव वाद कहते है उसके अनुसार ऐन्द्रिय ज्ञान ही मौलिक ज्ञान है।

4.11 अध्ययन के उद्‌देश्य :– हमारे शोध प्रबन्ध के निम्नलिखित उद्‌देश्य है

i) प्राचीन न्याय दर्शन के मूल सिद्धान्तों की मीमांसा करना।

ii) आधुनिक भारतीय दार्शनिको द्वारा किए गए न्याय दर्शन के समीक्षात्मक विश्लेषण का अध्ययन करना।

iii) न्याय दर्शन की ज्ञान मीमासा एवं शिक्षा दर्शन की ज्ञान मीमांसा की आधारभूत मान्यताओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।

5 **सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा या पुनरावलोकन :—** अनुसंधानकर्ता किए गए कार्य की सफलता के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह भलीभांति प्रकार से सम्बन्धित साहित्य एवं सामग्री का ज्ञान प्राप्त करें।

सम्बन्धित साहित्य से हमारा तात्पर्य उन पुस्तकों, ज्ञान—कोश, प्रकाशित तथा अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, अभिलेख, पत्र पत्रिकाओं से है जिनसे शोधकर्ता अपनी समस्या का चयन एवं अध्ययन का प्रारूप तैयार करता है।

न्याय दर्शन का सबसे प्राचीन ग्रन्थ ''सूत्र है जो अक्षपाद गौतम के द्वारा लिखा गया। इसका रचना काल छटी शतब्दी ईसा पूर्व माना जाता है।

वात्सायान ने ''न्याय भाष्य'' लिखा जो ''न्याय सूत्र'' पर एक टिप्पणी थी।

इसके पश्चात् उद्योतकर की इस रचना के बाद भी न्याय शास्त्र पद बौद्धों ने टिप्पणी करना नहीं छोड़ा फलस्वरूप ''न्याय वृतिका'' पर भी एक टीका लिखा गया जो प. वाचस्पति मिश्र ने नवीं शताब्दी में ''न्याय वृतिका तात्पर्य टीका'' नाम से अत्यधिक महत्वपूर्ण टीका है।

प. वाचस्पति मिश्र ने न्याय शास्त्र को शुद्ध एवं लिपिबद्ध किया जिसमें 5 अध्याय तथा 10 आहिन्क है, 84 प्रकरण एवं 528 सूत्र है, 196 पद एवं 8385 अक्षर है।

दो अन्य रचना ''न्याय सुकिनी बन्धा'' एवं न्यायसुत्र धारा प. वाचस्पति मिश्रा द्वारा लिखी गई टीका है।

उद्याना की ''न्यायतात्पर्य परिशुद्धि'' वाचस्पति मिश्र की टीकाओं पर की गई टिप्पणी है।

उद्यान की ''न्याय कुसुमाजंलि एव न्याय का प्रथम क्रमबद्ध लेख है तथा इन्होंने आत्मतत्व विवेका'', किरनावली, न्याय परिशिष्ठा की रचना की

जयंत भट्ट की न्याय मंजरी 10वीं शताब्दी में किया गया एक स्वतंत्र कार्य है।

''न्यायसारा'' 10वीं शताब्दी मे न्याय दर्शन पर किया गया एक सर्वे है जो ''भाषवरंजन'' द्वारा किया गया था।

केशव मिश्रा का, न्याय दर्शन में 13वीं शताब्दी मे किया गया महत्वपूर्ण कार्य ''तर्क भाषा'' में उपलब्ध है।

वश्दराज ने ''तार्किकराक्ष'' 12वीं शताब्दी मे जो कि न्याय व वैशेषिक दर्शन पर किया गया कार्य है, कि रचना की।

गगेंश उपाध्याय ने 12वीं शताब्दी में नव्य न्याय के ऊपर टीका लिखी जो ''तत्व चितांमणि'' थी।

वर्धमान उपाध्याय ने 1225 ईस्वी में ''न्याय–निबन्ध प्रकाश'' की रचना की जो उद्याना की ''न्यायतात्पर्य परिशुद्धि'' पर लिखी टीका है।

वासुदेव सर्वभौम 16वीं शताब्दी ''तत्वचिंतामणि व्याख्या'' एक महान कार्य है।

रघुनाथ शिरोमणि ने ''तत्व चिंतामणि दीधिती'' एवं ''पदार्थ खंडन'' मे महत्वपूर्ण कार्य किया।

विश्वनाथ ने ''न्याय सूत्र वृति'' (17वीं शताब्दी में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया)।

इसके पश्चात् न्याय दर्शन पर 17वीं शताब्दी में अंतिम दो कार्य हुए जिसमें जगदीश तार्कालकार और गंगाा भट्टाचार्य ने 'तत्व चिन्तामणिदिधीती' पर टीकाएँ प्रस्तुत की।

अनाम भट्ट ने 17वीं शताब्दी मे प्राचीीन एवं नव्य न्याय को जोड़ने का कार्य किया जिसमें उन्होंने दो टिकाए लिखी ''तर्क संग्रह'' तथा ''दिपिका''

जाखड राजवंती ने (2015) ''न्याय वैशैषिक योग और अद्वैत – वेदान्त में ईश्वर का स्वरूप'' पर अध्ययन करके अपने निष्कर्ष दिए कि वैदिक संहिताओं में ''ईश्वर'' पद का नामतः उल्लेख नहीं मिलता तथापि उसे ''एकमसत्'', ''प्रजापति'', ''पुरूष'' आदि नामों से सम्बोधित किया गया है।

न्याय–वैशेषिक दर्शनों की प्रारम्भिक विचारधारा वस्तुतः ईश्वरवादी प्रतीत नहीं होती परन्तु इन्हें ईश्वरवादी माना जाने लगा।

वर्मा अंजु, (2015) ने अपने अनुसंधान ''न्याय दर्शन में ज्ञान का स्वरूप'' में निष्कर्ष निकाला कि ज्ञान की प्रक्रिया चलती रहती है तथा आत्मा ज्ञान स्वरूप है तथा उसके ज्ञान का विनाश नहीं होता है ज्ञान गुण भी है और आत्म स्वरूप भी।

नैयायिकों ने प्रत्यक्ष अनुमान उपमान और शब्द चार प्रमाण ज्ञान के माने है इनके मतानुसार इन चार प्रमाणों से ही यथार्थ ज्ञान प्राप्त होता है।

शर्मा निमिशा (2016) ने अपने अनुसंधान ''Tarkbhsha a Study'' में इन्होने ''केशव'' मिश्रा द्वारा रचित टीका ''तर्कभाषा'' पर अपने विचार व्यक्त किए है।

सुशील के.सी. (2010) ''Jain, Nyaya, vaishesik philosophies a comparative study'' में तीनों दर्शनों का तुलनात्मक अध्ययन करके यह निष्कर्ष निकाला की न्याय वैशेषिक आस्तिक जबकि जैन दर्शन नास्तिक दर्शन है।

6 Research gaps indentified in the proposed field of investigation (Based on the Review)

प्रायः प्राचीन भारतीय दर्शनों के विषय में ऐसा माना जाता है कि वे मोक्ष प्रधान है और इनका लक्ष्य केवल दुःखों से मुक्ति है। किसी प्राचीन भारतीय दर्शन, जिसका

इतिहास 2 से 3 हजार वर्षों का है, को आज के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन का विषय बनाना कभी अप्रासंगिक लग सकता हैं, हो सकता है कि किसी को ऐसा करना अतीत की पुनरावृत्ति लगे। न्याय दर्शन की ज्ञान मीमांसा का दार्शनिक दृष्टि से विश्लेषण करना हमारे लिए इस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए शिक्षा दर्शन में अनुसंधान करने का एक प्रयास है।

औचित्य का प्रश्न हर उस मानवीय कर्म के संबंध में उठाया जा सकता है जिसे मनुष्य सोच–समझकर और बुद्धिसंगत रूप से करता हैं अब यदि अनुसंधान की बात करें तो यह एक ऐसा बौद्धिक कर्म है जिसमें औचित्य का प्रश्न हमेशा प्रासंगिक रहेगा। हमारे अध्ययन का औचित्य कुछ ऐसे प्रश्नों को उठाना है जिनके तत्संगत और बुद्धिसम्मत उत्तर दिए जा सकते हैं। न्याय दर्शन का इतिहास बहुत पुराना है। पर हमें प्रतीत होता है कि आज भी इसके अध्ययन की प्रासंगिकता है, विशेषकर शिक्षा दर्शन में जहाँ पर ज्ञान, ज्ञान का तात्पर्य, जानने की विधि, ज्ञान के प्रमाण, ज्ञान, की रचना आदि प्रश्न हमेशा उठाए जाते रहे हैं।

हमारे इस अध्ययन का औचित्य न्याय दर्शन की उस प्राचीन चिंतन परम्परा को समझना है जिसने शताब्दियों तक भारत में तर्क, विमर्श चिंतन, सत्य का साक्षात्कार, बौद्धिकता और उससे जुड़े कई आयामों को चिंतन के केन्द्र में रखा। मात्र अतीत के प्रति अनुवाद हमारा उद्देश्य नहीं है बल्कि विचार के वर्तमान धरातल की उस नींव को समझना है जिसको हमारे विचारकों ने तर्क, अनुभव, चिंतन की गहराई में रखा था। उपयुक्त मानक रूपी दृष्टिकोण को मद्देनजर रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन सार्थक एवं औचित्य पूर्ण है।

8 अध्ययन की विधि :– हमारे शोध प्रबन्ध की अध्ययन विधि विश्लेषणात्मक होगी, जिसमें न्यायदर्शन के मूल सिद्धान्तों की विवेचना करते हुए उसकी ज्ञान मीमांसा को समझने का प्रयास किया जाएगा। अपने शोध प्रबन्ध में हम अध्ययन की ऐतिहासिक विधि का भी प्रयोग करेंगे, क्योंकि न्याय दर्शन की चिंतन परम्परा का

इतिहास बहुत प्राचीन है। ऐतिहासिक रूप से गौतम के न्याय सूत्र और उस पर लिखी गई टीकाओं का अध्ययन किया जाएगा साथही आधुनिक भारतीय दार्शनिक जैसे डॉ. राधाकृष्णन, प्रो. डी.पी. चटोपाध्याय, प्रो. कीरीट जोशी, डॉ. के. सच्चिदानंद मूर्ति और प्रो. दयाकृष्ण के द्वारा भारतीय दर्शन का जो समीक्षात्मक विश्लेषण किया गया है उसको भी अध्ययन का विषय बनाएंगे।

शोध प्रबन्ध में दर्शन की वैचारिक तुलनात्मक अध्ययन विधि का भी प्रयोग किया जाएगा जिसके द्वारा न्याय दर्शन की ज्ञान मीमांसा और शिक्षा दर्शन की ज्ञान मीमांसा के आधारभूत मान्यताओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाएगा। हमारा यह भी प्रयास होगा कि हम कुछ ऐसे नए प्रश्नों को उठाने का प्रयत्न करें जो न्याय दर्शन के प्राचीन योगदान को शिक्षा दर्शन की आधुनिक ज्ञान मीमांसा के सन्दर्भ में समझने में सहायक हो सके।

8.1 अनुसंधान के प्रश्न :–

अपने शोध प्रबन्ध में हम निम्नलिखित प्रश्नों को समझने का प्रयास करेंगे।

1. न्याय दर्शन का उद्देश्य क्या है ?
2. क्या मोक्ष प्राप्ति न्याय का अन्तिम लक्ष्य है ?
3. न्याय दर्शन की ज्ञान मीमांसा का उद्देश्य क्या है ?
4. ज्ञान, ज्ञान की उत्पत्ति, ज्ञान का प्रमाण और प्रमाण्यवाद आदि पर न्याय का मूल विचार क्या है ?
5. शिक्षा दर्शन की ज्ञान मीमांसा और न्याय की ज्ञान मीमांसा में क्या संबंध है ?
6. क्या बिना ज्ञान मीमांसा के शिक्षा दर्शन सम्भव है ?
7. विचार परम्पराएं या सिद्धान्त जैसे प्रयोजनवाद, उपयोगितावाद, अनुभववाद, और संरचनावाद से न्याय दर्शन की ज्ञान मीमांसा का क्या संबंध है ?
8. क्या न्याय दर्शन की ज्ञान मीमांसा से हम शिक्षा दर्शन की ज्ञान मीमांसा मे कोई नया वैचारिक आयाम जोड़ सकते हैं ?

8.2 अध्ययन की परिसीमा :– हमारे द्वारा प्रस्तावित शोध प्रबन्ध में न्याय दर्शन के मूल ग्रन्थ और उस पर लिखी गई टिकाएं तथा आधुनिक भारतीय दार्शनिकों के द्वारा न्यायदर्शन पर किए गए चिंतन को आधार बनाया जाएगा। हम प्राचीन न्यायदर्शन पर ध्यान केन्द्रित करेंगे तथा नव्य न्याय हमारे अध्ययन का विषय नहीं होगा। ज्ञान के कुछ आधुनिक पाश्चात्य सिद्धान्तों की हम प्राचीन न्याय दर्शन की ज्ञान मीमांसा से तुलना करेंगे।

9 हिन्दी पुस्तकें

1	उपनिषद् अंक, गीताप्रेस, गोरखपुर – 2004
2	दया कृष्ण, ज्ञान मीमांसा, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर – 1973
3	दया कृष्ण, भारतीय एवं पाश्चात्य दार्शनिक परम्पराएं, एसएपी, दर्शनशास्त्र विभाग, राजस्थान विश्विद्यिालय, जयपुर – 1994
4	पाण्डेय गोविन्द चन्द्र, मूल्य मीमांसा, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी – 1973
5	पाण्डेय गोविन्द चन्द्र, भारतीय परम्परा के मूल स्वर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली – 1989
6	लाठ मुकुन्द, संगीत एवं चिन्तन, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली – 1994
7	वेद कथांक, गीताप्रेस, गोरखपुर – 1999
8	शल्य यशदेव, समाजः दार्शनिक परिशीलन, रावत पब्लिकेशन, जयपुर – 1991
9	शल्य यशदेव, मूल्य तत्व मीमांसा, दर्शन प्रतिष्ठान, जयपुर – 1994
10	हर्ष डी०डी०, महाभारत का अर्थ, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर

1	Krishna, Daya (1969). *Social Philosophy: Past and Future,* Indian Institute of Advance Studies, Shimla.
2	Krishna, Daya (1997). *Indian Philosophy : A New Approach, Studies in Indian Tradition Series No. 7*, Indian Books Center, New Delhi
3	Krishna, Daya (2001). *New Perspectives in Indian Philosophy*, Rawat puvlication, Jaipur
4	Krishna, Daya (2002) *Developments in Indian Philosophy from Eighteen Century Onwards: Classical and Western*, Vol.X Pt.I, PHISPC, CSC, New Delhi
5	Krishna, Daya (2005) *Discussion and Debates in Indian Philosophy : Issues in Vedanta, Mimamsa and Nyaya*, ICPR, New Delhi
6	Krishna, Daya (2006). *Indian Philosophy : A New Counter Perspective* (revised and enlarged edition), Sri Garib Das Oriental Series No. 310, Indian Books Center, New Delhi
7	Krishnamurti, J. (1974) *Education*, Orient Longmah
8	Murty K. Sachchidananda, (2001) *'Be a Lamp Unto Yourelf'* Adyar Pemphelets, New Series, No. 2, The Theosophical publishing House, Adyar, Chennai - 20
9	Murty K. Sachchidananda, (2007) *Evolution of Indian Philosophy*, Andhra University Philosophical Series, no-08. D.K. printworld (P) Ltd, New Delhi- 15

Signature of the Candidate with date

Outline Approved

Name and Signature of supervisor with date & seal.

………………………..

………………………..

………………………..

………………………..